Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-2(A)| February - 2026

Original Article

स्वामी विवेकानन्द ने विदेश में वेदान्त और विश्व - बन्धुत्व

डॉ. देवचन्द साह
समाजिक विज्ञान संकाय (इतिहास) ललित नारायण मि. वि. का. दरभंगा
Email: devchandrasah501@gmail.com

Manuscript ID:
JRD -2026-180207
ISSN: 2230-9578
Volume 18
Issue 2(A)
Pp. 24-26
February - 2026
Submitted: 15 Jan. 2026
Revised: 25 Jan. 2026
Accepted: 10 Feb. 2026
Published: 28 Feb. 2026

शोध सारांश

धर्म –महासभा की समाप्ति के **पश्चात्** *स्वामी विवेकानन्द ने अमेरिका की तैयार भूमि में वैदान्तिक सत्यों के बीच बोने के लिये कई प्रचार दौरे किये। शीघ्र ही उन्हें बोध होने लगा कि व्याख्यान कम्पनी उनका नाजायज लाभ उठा रही है। फिर उन्हें उन लोगों के प्रचार का तरीका भी पसन्द न था। उन्हें लोगों के सामने इस प्रकार पेश किया जाता था मानो वे एक सर्कस के प्रमुख आकर्षण हों। अतः उन्होंने व्याख्यान कम्पनी से सम्बन्ध तोड़ लिये और अपने व्याख्यान स्वयं ही आयोजित करने लगे। उन्होंने चर्चों, क्लबों तथा घरेलू सभाओं से आमन्त्रण स्वीकार किये और सप्ताह में बारह–चौदह या उससे भी अधिक व्याख्यान देते हुए अमेरिका के पूर्वी तथा मध्य–**पश्चिमी** *प्रान्तों का व्यापक दौरा किया। उनकी सभाओं में सैकड़ों– हजारों की संख्या में तरह–तरह के श्रोता आते जिनमें विश्वविद्यालय के प्राध्यापक, उच्च कुल की महिलाएँ, सच्चे जिज्ञासु और बालसुलभ श्रद्धालु तो आते ही, पर साथ ही बातूनी, आलसी। उत्सुकतानिवारक और आवारा लोग भी आया करते थे।*

प्रस्तावना

स्वामीजी के सामक्ष अनेक प्रकार की बाधाएँ उपस्थित हुईं, उनमें कट्टर ईसाई मिशनरियों द्वारा विरोध विरोध भी एक था। उन्हीं के ढंग का ईसाई मतवाद प्रचार करने पर वे लोग स्वामीजी की सहायता करने को प्रस्तुत थे, परन्तु उनके अस्वीकार कर देने पर वे उनके बारे में कुत्सित कथाओं का प्रचार करने लगे। मिशनरी लोग स्वामीजी के विरोधी प्रचार में इतने सफल हुए कि कुछ अमेरिकी लोगों ने स्वामीजी को दिया हुआ अपना आमन्त्रण वापस ले लिया। परन्तु स्वामीजी विचलित नहीं हुए और मानवता के उद्धारक ईसा मसीह के प्रति सर्वोच्च सम्मान दिखाते हुए उनके द्वारा उपदिष्ट प्रेम, त्याग तथा सत्य का प्रचार करते रहे। कितने महत्त्वपूर्ण थे विवेकानन्द जी के ये शब्द– "एक चर्च में जन्म लेना अच्छा है, पर उसी में मर जाना अनुचित है।" यहाँ 'चर्च' शब्द से उनका स्पष्ट अभिप्राय है– 'सभी तरह की संगठित धार्मिक संस्थाएं।' उनके शब्द कैसे वज्र के समान श्रोताओं के कान में प्रविष्ट हुए होंगे, जबकि एक दिन उन्होंने कहा– "मैं हूँ अनन्त चेतना का वह सागर, जिसकी ईसा, बुद्ध और कृष्ण लहरें मात्र हैं!" 1

24 जनवरी 1958 को विवेकानन्द कोलम्बो पहुँचे, तो लंका निवासी भारतीयों ने कोलम्बो और पाम्बन में उनका भव्य स्वागत किया। फिर भारत की भूमि पर रामनाड, मदुराई, मद्रास, कलकत्ता इत्यादि जहाँ भी गए उनका इसी तरह भव्य स्वागत हुआ। रामनाड अर्थात् रामेश्वरम में उनका जुलूस निकाला, प्राचीन परम्परा के अनुसार उन्हें सम्मान देने के लिए वहाँ का राजा उनके रथ में जुतकर रथ खींचा। इस स्वागत– सम्मान से उनके मन में जो उछला उत्पत्र हुआ, उसे अपनी चहेती बहन मेरी हेल के नाम लिखे पत्र में इस प्रकार व्यक्त किया।

"यह सारा देश मेरे स्वागत के लिए एक प्राण होकर उठ खड़ा हुआ। हर स्थान पर हजारों की संख्या में स्त्री–पुरुषों ने जय–जयकार किया। राजाओं ने मेरी गाड़ी खींची, राजधानियों के मार्गों पर हर कहीं स्वागत–द्वार बनाये गए, जिन पर शानदार आदर्श वाक्य अंकित थे आदि!" संयोग की बात है कि इन्हीं दिनों धर्म–महासभा के अध्यक्ष डॉ० बरोज भी ईसाई धर्म का प्रचार करने भारत आए। पर वे असफल होकर लौटे। विवेकानन्द अपने इसी पत्र में लिखते हैं–

Creative Commons (CC BY-NC-SA 4.0)
This is an open access journal, and articles are distributed under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial-ShareAlike 4.0 International Public License, which allows others to remix, tweak, and build upon the work noncommercially, as long as appropriate credit is given and the new creations ae licensed under the idential terms.

Address for correspondence:
डॉ. देवचन्द साह, समाजिक विज्ञान संकाय (इतिहास) ललित नारायण मि. वि. का. दरभंगा

How to cite this article:
साह, . देवचन्द . (2026). स्वामी विवेकानन्द ने विदेश में वेदान्त और विश्व - बन्धुत्व. Journal of Research & Development, 18(2(A)), 24–26. https://doi.org/10.5281/zenodo.18933175

Quick Response Code:
Website: https://jrdrvb.org/
DOI: 10.5281/zenodo.18933175
OPEN ACCESS

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-2(A)| February - 2026

मुझे आशा है कि डॉ० बरोज अमेरिका पहुँच गये होंगे। बेचारे वे यहाँ अति कट्टर ईसाई धर्म का प्रचार करने आए थे, और जैसा होता है, किसी ने उनकी न सुनी। इतना अवश्य है कि उन्होंने प्रेमवूर्वक उनका स्वागत किया, परन्तु वह मेरे पत्र के कारण ही था। मैं उनको बुद्धि तो नहीं दे सकता था। इसके अतिरिक्त वे कुछ विचित्र स्वभाव के व्यक्ति थे। मैंने सुना है कि मेरे भारत आने पर राष्ट्र ने जो खुशी मनाई, उससे जलन के मारे वे पागल हो गए थे। कुछ भी हो, तुम लोगों को उनसे बुद्धिमान व्यक्ति भेजना उचित था क्योंकि डॉ. बरोज के कारण हिन्दुओं के मन में धर्म प्रतिनिधि सभा एक स्वांग–सी बन गई है। अध्यात्म विद्या के संबंध में पृथ्वी का कोई भी राष्ट्र हिन्दुओं का मार्ग प्रदर्शन नहीं कर सकता और विचित्र बात तो यह है कि ईसाई देशों से जितने लोग यहाँ आते है, वे सब एक ही पुराना मूर्खताभरा तर्क देते हैं कि ईसाई धनवान् और शक्तिक्तान् हैं और हिन्दू उचित नहीं हैं, इसलिए ईसाई मत हिन्दू धर्म की अपेक्षा श्रेष्ठ है। इस पर हिन्दू उचित ही यह प्रत्युत्तर देते हैं कि यही कारण ह ैजिससे हिन्दू मत धर्म कहला सकता है और ईसाई मत नहीं, इस पाशविक संसार में अधर्म और धूर्तता ही फलती है, गुणवानों को तो दुःख भोगना पड़ता है।" 2

ईसी संबंध में एक दूसरी घटना भी उल्लेखनीय है। विवेकानन्द जब कलकत्ता पहुँचे तो वहाँ अकाल पड़ा हुआ था। लोगों का ख्याल था कि उनके स्वागत पर खर्च न करके कुल पैसा पैसा दुर्भिक्ष–निवारण फंड में चंदा दे दिया जाये। पर उन्होंने ऐसा न करके अपना जुलूस निकलवाना ही पसंद किया। बाद में जब एक शिष्य ने पूछा कि उन्होंने ऐसा क्यों किया तो स्वामीजी ने उत्तर दिया –

"हाँ, मेरी इच्छा ही थी कि मेरे लिए खूब धूमधाम हो। क्या बात है की, थोड़ी धूमधाम हुए बिना उनके (श्रीरामकृष्ण) नाम से लोग कैसे परिचित होंगे, और उनसे प्रेरित कैसे होंगे? इतना स्वागत–सम्मान क्या मेरे लिए किया गया है? नहीं, यह तो उन्हीं के नाम का जय–जयकार हुआ है। उनके बारे में जानने की लोगों के मन की कितनी इच्छा जाग्रत हुई है। जब लोग क्रमशः जानेंगे तभी तो देश का मंगल होगा, जो देश के मंगल के लिए आए है, उनको जाने बिना देश का मंगल किस प्रकार होगा? उनको ठीक–ठीक जाने लेने से 'मनुष्य' तैयार होंगे। और मनुष्य यदि तैयार हो गए, तो दुर्भिक्ष आदि को दूर करना फिर कितनी देर की बात है?" देश का मंगल ही उनके सब कार्यों में सर्वोपरि था। वे व्यक्ति निरपेक्ष होकर राष्ट्रयम बन गए थे और राष्ट्र की आत्मा को झंझोड़ना, जागृत करना ही उनके जीवन का एकमात्र उद्देश्य था।

स्वामीजी ने अपने कलकत्ता के भाषण में कहा था– "प्रत्येक जाति के लिए उद्देश्य साधन की अलग–अलग कार्य प्रणालियाँ है, कोई राजनीति, कोई समाज सुधार और कोई दूसरे विषय को अपना प्रधान आधार बनाकर कार्य करती है। हमारे लिए धर्म की पृष्ठभूमि लेकर कार्य करने के सिवा दूसरा कोई उपाय नहीं है। अमेरिकी शायद समाज–सुधार के माध्यम से भी धर्म समझ सकते है। परन्तु हिन्दू राजनीति, समाज–विज्ञान और दूसरा जो कुछ है, सबको धर्म के माध्यम से ही समझ सकते हैं। जातीय जीवन संगीत का मानो यह प्रधान स्वर है और उसी प्रधान स्वर के नष्ट होने की शंका हो रही थी। ऐसा लगता था, मानो हम लोग अपने जातीय जीवन के इस मूल भाव को हटाकर उसकी जगह दूसरा भाव स्थापित करने जा रहे थे, अपने जातीय जीवन के धर्मरूप मेरुदंइ की जगह राजनीति का मेरुदंड स्थापित करने जा रहे थे, यदि इसमें हमें सफलता मिलती, तो इसका फल पूर्ण विनाश होता, परन्तु ऐसा होने वाला नहीं था। यही कारण है कि इस महाशक्ति (श्रीरामकृष्ण) का आविर्भाव हुआ। एक हिन्दू होने के कारण तुम्हारा यह कर्तव्य है कि तुम इस शक्ति का अध्ययन करो, तथा भारत के कल्याण, उसके पुनरुत्थान और समस्त मानव जाति के हित के लिए इस शक्ति के द्वारा क्या कार्य किए गये हैं, इसका पता लगाओ। 3

जैसा तुम लोगों ने कहा है, हमें सम्पूर्ण संसार जीतना है। हाँ, यह हमें करना ही होगा। भारत को अवश्य ही संसार पर विजय प्राप्त करनी है। इसकी अपेक्षा किसी छोटे आदर्श से मुझे कभी भी संतोष न होगा। यह आदर्श संभव है, बहुत बड़ा हो और तुमसे से अनेक को इसे सुनकर आश्चर्य होगा, किन्तु हमें इसे आदर्श बनाना है। या तो हम संपूर्ण संसार पर विजय प्राप्त करेंगे या मिट जायेंगे। इसके सिवा और कोई विकल्प नहीं है। जीवन का चिह्न है विस्तार। हमें संकीर्ण सीमा के बाहर जाना होगा, हृदय का प्रसार करना होगा, और यह दिखाना होगा कि हम जीवित है, अन्यथा हमें इस पतन की दशा में सड़कर मरना होगा, इसके सिवा दूसरा रास्ता नहीं है। परन्तु मेरी बात मानो, ऐसा सभी देशों में है। जिन देशों के जीवन का मेरुदंड राजनीति है, वे सब राष्ट्र आत्मारक्षा के लिए वैदेशिक नीति का सहारा लिया करते हैं। जब उनके अपने देश में आपस में बहुत अधिक लड़ाई–झगड़ा, आरंभ हो जाता है, तब वे किसी विदेशी राष्ट्र से झगड़ा मोल ले लेते है, इस तरह तत्काल घरेलू लड़ाई बन्द हो जाती है। क्या हमें केवल अपने ही देश को जगानाा होगा? नहीं, यह तो एक तुच्छ बात है, मैं एक कल्पनाशील व्यक्ति हूँ, मेरी यह भावना है कि हिन्दू जाति सारे संसार पर विजय प्राप्त करेगी। 4

संसार में जितने भी धर्म हैं, उनमे प्रत्येक की श्रेष्ठता स्थापित करने के अनोखे–अनोखे दावे सुनने का मुझे अभ्यास हो गया है। तुमने भी शायद हाल में मेरे एक बड़े मित्र डॉ० बरोज द्वारा पेश किए गए दावे के विषय में सुना होगा कि ईसाई धर्म ही एक ऐसा धर्म है, जिसे सार्वजनिक कह सकते हैं, मैं अब इस प्रश्न की मीमांसा करूँगा और तुम्हारे सम्मुख उन तर्कों को प्रस्तुत करूँगा, जिनके कारण मैं वेदान्त–सिर्फ वेदान्त ही को सार्वजनिक मानता हूँ, और वेदान्त के सिवा कोई अन्य धर्म सार्वजनिक नहीं कहला सकता। हमारे वेदान्त धर्म के सिवा दुनिया के रंगमंच पर जितने भी अन्यान्य धर्म हैं, वे उनके संस्थापकों के जीवन के साथ सम्पूर्णतः संश्लिष्ट और सम्बद्ध हैं। उनके सिद्धान्त, उनकी शिक्षाएँ उनके मत और उनका आचार–शास्त्र जो कुछ है, जो कुछ है, सब किसी–न–किसी धर्म संस्थापक के जीवन के आधार पर ही खड़े हैं। 5

फिर अपना दावा पेश करते हुए उन्होंने कहा कि हमारा धर्म कुछ तत्त्वों की नींव पर खड़ा है, "हमारे धर्म में जितने अवतार, महापुरूष और ऋषि हैं और किसी धर्म में नहीं है? हमारे देश में 'इष्ट–निष्ठा' रूपी जो अपूर्व सिद्धान्त प्रचलित हैं, जिसके अनुसार इन महान् धार्मिक पुरुषों में से अपना इष्ट देवता चुनने की पूरी स्वाधीनता दी जाती है, तुमको यह सोचने की भी स्वाधीनता है कि जिसको तुमने स्वीकार किया है, वह सब पैगम्बरों में महान् हैं और सब अवतारों में श्रेष्ठ हैं, इसमें कोई आपत्ति नहीं, परन्तु

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-2(A)| February - 2026

सनातन तत्व समूह ही पर तुम्हारे धर्म साधन की नींव होनी चाहिए। यहाँ अद्भुत तथ्य यह है कि जहाँ त कवे वैदिक सनातन सिद्धान्तों के ज्वलंत उदाहरण हैं, वहीं तक हमारे अवतार मान्य हैं। भगवान् श्रीकृष्ण का महात्म्य यही है कि वे भारत में इसी तत्त्वादी सनातन धर्म के सर्वश्रेष्ठ प्रचारक और वेदान्त के सर्वोत्कुष्ट व्याख्याता हुए हैं।

श्रीरामकृष्णजी के आदर्श 'जितने मत उतने पथ' का आशय है कि सभी धर्म सत्य हैं और जो जिस धर्म को मानता है, उसके लिए वही ठीक है, हम धर्मों का समन्वय नहीं समझौता है और यों कहिए कि शान्तिमय अस्तित्व का 'जिओ और जीने दो' का सिद्धान्त हैं पर स्वामीजी ने आक्रामक रुख अपनाया और दूसरों का विश्व धर्म का दावा नकार करके अपना दावा पेश किया। उन्हें धर्म के माध्यम से राजनीति की लड़ाई लड़नी थी। वे स्वयं कहते हैं, "सच बात यह है कि मैं धर्म–महासभा का उद्देश्य लेकर अमेरिका नहीं गया था, वह सभा तो मेरे लिए गौण वस्तु थी, उससे हमारा रास्ता बहुत कुछ साफ हो गया और कार्य करने की बहुत कुछ सुविधा हो गई। इसमें संदेह नहीं। परन्तु वास्तव में हमारा धन्यवाद संयुक्त राज्य अमेरिका के निवासी, सहृदय आतिथेय, महान् अमेरिकी जाति को मिलना चाहिए, जिसमें दूसरी जातियों की अपेक्षा भ्रातृभाव का अधिक विकास हुआ है।" 6

अब वे देश की भुमि पर थे, विदेश में जो बातें उन्होंने नहीं कही, कहना उचित भी नहीं था, अब वे खुलकरक बोल रहे थे। भ्रम–भ्रान्तियों को तोड़ने और कुसंस्कारों के जालों को काटने के लिए उन्होंने आलोचना और आत्मालोचना की खड्ग का निर्भीकता से प्रयोग किया। इसके बिना जन–साधारण के बीच फैले अंतर्विरोधों का निराकरण संभव नहीं था–

"यद्यपि मैं पश्चिम के बहुत से सभ्य देशों में घूम चुका हूँ पर अपने देश के इस भाग के दर्शन का सौभाग्य मुझे नहीं मिला था। अपनी ही जन्मभूमि बंगाल के इस आंचल की विशाल नदियों, विस्तृत उपजाऊ मैदानों और रमणीक ग्रामों का दर्शन पाने पर मैं अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। मैं नहीं जानता था कि इस देश के जल और स्थल सभी में इतना सौंदर्य तथा आकर्षण भरा पड़ा है। किन्तु नाना देशों के भ्रमण से मुझे यह लाभ हुआ कि मै। विशेष रूप से अपने देश के सौंदर्य का मूल्यांकन कर सकता हूँ।" 7 "इसी प्रकार मैं पहले धर्म–जिज्ञासा से नाना सम्प्रदायों मैं – अनेक ऐसे सम्प्रदायों में जिन्होंने दूसरे राष्ट्रों के भावों को अपना लिया है – भ्रमण करता था, दूसरे के द्वार पर भिक्षा माँगता था। तब मैं जानता न था कि मेरे देश का धर्म, मेरी जाति का धर्म इतना सुंदर और महान् है। यद्यपि हमारे देशवासी अप्रतिम धर्मनिष्ठ होने का दावा करते हैं, पर हमारे इस महान् देश में यूरोपीय ढंग के विचार फैलने के कारण उनमें धर्म के प्रति व्यापक उदासीनता आ गई है। हाँ, यह बात जरूर है और उससे मैं भलीभाँति अवगत हूँ कि उन्हें जिन भौतिक परिस्थितियों में जीवन–यापन करना पड़ता है, प्रतिकूल हैं।" 8

इन प्रतिकूल भौतिक परिस्थितियों ने विभित्र स्तरों के जिन विचारशील लोगों का निर्माण किया था, विवेकानन्दजी ने उनका वर्गीकरण इस प्रकार किया–

"वर्तमान समय मे हम लोगों के बीच कुछ ऐसे सुधारक हैं, जो हिन्दू जाति के पुनरुत्थान के लिए हमारे धर्म में सुधार या यों कहिए उलट–पलट करना चाहते हैं। निस्संदेह उन लोगों में कुछ विचारशील व्यक्ति हैं, लेकिन साथ ही ऐसे बहुत–से लोग भी हैं जो अपने उद्देश्य को बिना जाने दूसरों का अंधानुकरण करते हैं इस वर्ग के सुधारक हमारे धर्म में विजातीय विचारों का प्रवेश करने में बड़ा उत्साह दिखाते हैं। कहते हैं कि हिन्दू धर्म सच्चा धर्म नहीं है, क्योंकि इसमें मूर्ति–पूजा का विधान है। मूर्ति–पूजा क्या है? यह अच्छी या बुरी– इसका अनुसंधान कोई नहीं करता, केवल दूसरों के इशारे पर वे हिन्दू धर्म को बदनाम करने का साहस करते हैं। एक दूसरा वर्ग और भी है, जो हिन्दुओं के प्रत्येक रीति–रिवाज में वैज्ञानिकता ढूँढ़ निकालने का लचर प्रयत्न कर रहे हैं। वे सदा विद्युत्–शक्ति, चुम्बकीय शक्ति, वायु–कम्पन तथा उसी तरह की अन्य बातें किया करते हैं। कौन कह सकता है कि वे लोग एक दिन ईश्वर की परिभाषा करने में उसे विद्यत्–कम्पन का समूह न कह डालें। 9विदेशी शासकों ने हमारे धर्म पर न केवल ईसाई मिशनरियों द्वारा बल्कि विज्ञान के द्वारा भी आक्रमण किया। धर्म पर आक्रमण का अर्थ था संस्कृति और परम्परा पर आक्रमण। हर एक देश की संस्कृति और परम्परा इन्हीं संस्थाओं के माध्यम से विकसित होती है और एक उन्हीं में सुरक्षित रहती है। जब भौतिक उत्रति रुक जाने से संस्कृति और परम्परा का विकास रुक जाता है, तो इन धार्मिक संस्थाओं को नष्ट करने का और माँगे हुए विदेशी विचारों को, चाहे वे कितने ही उन्नत, श्रेष्ठ, तर्कसंगत तथा वैज्ञानिक ही क्यों न हों, ऊपर से लाद देने का प्रयास हितकर नहीं, अहितकर है; क्योंकि सुधार और क्रान्ति के नाम पर किए गये इस प्रयास का परिणाम होगा, अपने इतिहास और परम्परा को मिटाना, विकृत करना अथवा त्याग देना। अतः विवेकानन्द ने कहा कि इन माँगे हुए विचारों पर पलनेवाले तथाकथित देशभक्तों और सुधारकों को तो यह भी मालूम नहीं कि घाव कहाँ है, ये लोग मूर्ति–पूजा, विधाव–विवाह और बाल–विवाह आदि गौण बातों को लेकर हल्ला मचा रहे हैं। उन्होंने इनका वास्तविक रूप और अपना उद्देश्य इस प्रकार स्पष्ट किया– विगत कालों में सुधारों के लिए जो भी आंदोलन हुए हैं, उनमें से अधिकांश केवल ऊपर दिखावा मात्र रहे हैं। 10

संदर्भ सूची

1. डॉ. अस्थाना गीता – धार्मिक सांस्कृतिक साहित्य ज्ञान की रचनाएँ साहित्य रत्नालय प्रकाशन, कानूपर, 1986 पृ.234
2. डॉ. त्रिपाटी नरेष चन्द – स्वामी जी वेदांन्त की प्रासयिकत, अग्रवाल पब्लिकेषन्स, आगरा, 2003 पृ.5
3. डॉ. लाल बिहारी – धर्म सभाओं स्थापना का विवरण, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, 1963, पृ.9
4. अनिल कुमार – स्वामी जी आध्यात्मिक विधा व्याख्या की प्रासांगिकता, रत्नालय कानपुर, 1976 पृ.36
5. डॉ. पाण्डेय रामसकल – धर्म सभा के साथ जाति भेद भावना अन्याय प्रथाएँ, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, 2008, 299
6. वही पृष्ठ, 299
7. विवेकानन्द – रामकृष्ण भठ स्थापना सामाजिक विकास, अमन प्रकाश, नागपुर, 2013 पृ 6–7
8. विवेकानन्द – रामकृष्ण पठ में आध्यात्मिक विद्या का अध्ययन आकाज्ञा प्रकाशन, दिल्ली, 2013 पृ.58
9. वही पृष्ठ, 58
10. स्वामीी विवेकानन्द – रामकृष्ण मठ सामाजिक सांस्कृति ज्ञान का अध्ययन, नागपुर, 2012 पृ.44